बोक्सा जनजाति : बदलता समाज एंव बदलती परंपराएं

शोध संचयन

A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research

ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net

बीज शब्द : *बोक्सा, जनजाति, सामाजिक बदलाव, तराई, भाबर, झूम खेती, साझी, हाली।*

बोक्सा जनजाति आधुनिक चकाचौंध के प्रभाव व शेष समाज से सम्पको के कारण बदलावों की ओर अग्रसर है। आधुनिक बदलावों ने जहां जनजाति की परम्पराओं को प्रभावित किया है वहीं उनके जनजातीय जीवन में भी इसके कारण परिवर्तन आए हैं।

आधुनिक समाज का प्रभाव जनजाति पर स्पष्ट दिखायी पड़ता है। इस शोध आलेख में इस प्रभाव की विवेचना की गई है।

डॉ० सुनील दत्त खंडूड़ी
पाण्डेय भवन, खोला रोड,
श्रीनगर गढ़वाल
मो0: 9411129886
ई-मेल: khandasu@gmail.com

तराई भाबर के उपजाऊ भू-भाग में रहने वाली बोक्सा जनजाति का जीवन कृषि व्यवस्था पर आधारित है। तराई का क्षेत्र होने के कारण यहाँ की भूमि बहुत उर्वरक है और फसल अच्छी होती है। प्रारम्भ में बोक्सा लोग वनों से कन्दमूल फल आदि एकत्र कर जीवन यापन करते थे। परन्तु वनों पर सरकारी नियन्त्रण हो जाने से बोक्साओं का मूल व्यवसाय स्थायी खेती हो गया। तराई भाबर में कृषि कार्य करने वालों में बोक्सों को सर्वाधिक पुराना माना जाता है। भवानी दत्त जोशी के अनुसार बोक्सा साझी हल्दूखाता और मोटाढांक में मिलते थे, जहाँ सबसे पहले कृषि आरम्भ हो चुकी थी। तराई भाबर की इस जनजाति की कृषि प्रणाली 'झूम कृषि' पर आधारित थी। झूम व स्थानान्तरित खेती में न केवल जमीन बर्बाद होती है बल्कि उपज भी बहुत कम व घटिया श्रेणीं की होती है। इसका अन्तिम परिणाम यह होता है कि या तो उन्हें भूखा मरना पड़ता है, या खेती को छोड़ना पड़ता है। परन्तु वर्तमान मे बोक्से स्थायी कृषि ही कर रहे हैं। बोक्सा जनजाति में पुरूष आलसी प्रवृत्ति के होते हैं। प्रारम्भ में इनके पास इनके पास खेती लायक भूमि की कमी नहीं थी परन्तु कर्ज और नशे की आदत तथा अशिक्षित होने के कारण इनकी अधिकतर भूमि पहाड़ियों, पंजाबी शरणार्थियों एवं वन विभाग के द्वारा हथिया ली गयी। एक ओर जहाँ कुछ बोक्सा भूमि के स्वामी हैं, वहीं कुछ ऐसे हैं जो भूमिहीन हैं और ये अन्य जातियों के खेतों में जाकर कार्य करते हैं। अधिक भूमि ना होने के कारण अपने खाने हेतु ही अन्न उत्पन्न कर पाते हैं। आर्थिक संरचना मे बदलाव के कारण बोक्सा जनजाति की परंपरा और संस्कृति में महत्वपूर्ण परिवर्तन घटित हुए हैं। वर्तमान शोध आलेख इन्ही परिवर्तनों को रेखांकित करता है।

कला कौशल में बदलाव

एटकिन्सन के अनुसार 'इन लोगों में कोई कला अथवा निर्माण कौशल नहीं है तथा ये मात्र शिकार और थोड़ी-बहुत खेती करके अपना गुजारा करते हैं। औपनिवेशीकरण से पूर्व तराई भाबर के वनों में थारू और बोक्सा जनजातियाँ ही स्थाई रूप से निवास करती थी। भाबर में शताब्दियों से कृषि करते आ रहे थारू और बोक्सा जनजाति के लोग 'साझी' और 'हाली' का काम करते थे। बोक्साओं की भूमि पर बढ़ रहे अवैध कब्जों के बाद भी आज कृषि बोक्साओं का प्राथमिक व्यवसाय है। फर्क यह है कि पहले बोक्सा स्वयं की भूमि पर कृषि करते थे वहीं आज कृषि मजदूरों के रूप में कार्य कर रहे हैं। बोक्सा वर्ष में दो फसल प्राप्त करते हैं। रवि की फसल के रूप में गेहूँ, चना मसूर की खेती प्रमुख है। परन्तु बड़ी जोत के मालिक गन्ना व लाई की बुआई करते हैं। भूमि की मात्रा कम होने के कारण गन्ने तथा लाई जैसी नकदी

फसलों का वे अतिरिक्त उत्पादन करने में सक्षम नहीं होते हैं। प्रायः अपनी आवश्यकता भर के लिये नकदी फसलों को बोते हैं। परन्तु थारू और भुक्सा अभी भी धान-चावल को ही प्रमुख फसल मानते हैं। खेती का कार्य प्रायः स्त्री व पुरुष दोनों ही करते हैं। महिलायें हल नहीं चलाती हैं। नवम्बर से लेकर मार्च तक रबी फसल उगाते हैं तथा जून से लेकर सितम्बर तक खरीफ की फसल उगाते हैं। रबी में गेहूँ, जौ चना, मसूर, केसारी और लाई है तथा खरीफ में धान व मक्के की खेती करते हैं। इसके अतिरिक्त गन्ना नगदी फसल है। खेती प्रायः परम्परागत तरीके से करते हैं। वर्तमान में बोक्सा लोग अपने खेतों में उच्च पैदावार प्राप्त करने के लिये रासायनिक खादों का प्रयोग करते हैं और खाद खरीदने में असमर्थ परिवार भी रासायनिक खाद प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं। प्रायः जो परिवार सहकारी समितियों के सदस्य होते हैं उन्हें अनुदानित मूल्य पर रासायनिक खाद प्राप्त हो जाती है। आज बोक्साओं में उन्नत किस्म के बीजों के उपयोग का प्रचलन बढता जा रहा है। कुछ परिवार एक बार उन्नत किस्म के बीजों को खरीद कर फिर दो या अधिक फसलों के लिये उसी से बीज तैयार कर लेते हैं। उन्नत बीजों के प्रति बोक्साओं में ग्राह्यता का विकास हुआ है। जबकि बोक्सों में कुछ समय पूर्व रासायनिक खादों व उन्नत किस्म के बीजो का प्रचलन नहीं था। प्रायः जैवकीय खाद जैसे गोबर आदि का खरीफ की फसल में अधिक प्रयोग किया जाता था। जबकि रबी की फसलों में किसी भी प्रकार की खाद के प्रयोग का प्रचलन नहीं था।

बोक्सा गन्ना उत्पादन में प्रारम्भ से रुचि नहीं रखते थे। अनेक गाँवो में तो बोक्सा अपनी भूमि को अजनजातीय समुदायों को गन्ने की खेती हेतु ठेके पर दे देते थे। बोक्सा लोग धान की खेती करते हैं जो इनकी प्रमुख फसल है। इसके अतिरिक्त गन्ना, मक्का, गेहूँ, चना तथा लाही (सरसों) भी उत्पन्न की जाती है। परन्तु बोक्सा गाँवों में विशिष्ट रूप से खरीफ की फसल पर अधिक ध्यान दिया जाता था। अन्य जनजातियों से भिन्न बोक्सा जनजाति कभी भी भूमिहीन नहीं रही है।

आधुनिक योजनाएं और बदलाव

आधुनिक समय में सरकार के द्वारा जनजातियों को प्रदत्त सुविधाओं के तहत जनजाति क्षेत्रों में कृर्षि सुविधाओं के लिए सिंचाई की सुविधा की गयी है। 'ट्राइबल सब प्लान' के तहत वित्तीय वर्ष 2005-06 में समाज कल्याण विभाग द्वारा अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों को सिंचाई योजनाओं से सीधे लाभान्वित करने हेतु नहर निर्माण में रू0 55.56 लाख एवं बाढ़ सुरक्षा योजनाओं के लिये रू0 100.00 लाख का खर्च किया गय था। बोक्सा बाहुल्य क्षेत्र में ट्राइबल सब प्लान के तहत जनपद उघमसिंहनगर में बोक्सा बाहुल्य ग्रामों को सिंचाई सुविधा उपलबब्ध कराये जाने हेतु 4.80 किमी लम्बी गूलों की लाईनिंग एवं रैगुलेटरों के निर्माण की योजना वर्ष 2006 में स्वीकृत की गयी। बोक्सा बाहुल्य क्षेत्रों में सिचाई सुविधाओं तथा अन्य कृषि विकासात्मक कार्यो के कारण बोक्साओं की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में शुभ संकेत माने जा सकते हैं। दो शताब्दि पहले तक उनकी जीवन प्रणाली झूम की खेती अर्थात झाड़ी साफ कर अस्थाई खेती करना और शिकार प्रणाली पर निर्भर थी। बोक्सा जनजाति के क्षेत्र में शहतूत के वृक्षों की खेती भी बहुत अधिक मात्रा में होती है। सर्वप्रथम कैप्टन हत्र्फन नामक एक अंग्रेज अधिकारी द्वारा वर्ष 1858 में मंसूरी, देहरादून में रेशम कीटपालन का प्रायोगिक परीक्षण प्रारम्भ किया गया। आज बोक्सा क्षेत्रों में रेशम कीट पालन आर्थिक रूप में महत्त्वपूर्ण माना जाता है। बहुत से बोक्सा परिवार इसमें संलग्न हैं।

तराई भाबर में सदियों से निवास करने वाले बोक्साओं का वनों से अटूट सम्बन्ध है। बोक्साओं के बारे में माना जाता है कि भाबर के आदिमानव बोगसे है, प्रारम्भ में बोक्सा जनजाति इन्हीं जंगलों में रहते तथा जंगलों से प्राप्त लकड़ी, शहद, कन्द-मूल-फल, जंगली जानवरों का शिकार आदि करते तथा पास के तालाबों में मछली पकड़कर जीवन निर्वाह करते थे तथा साथ-साथ स्थानान्तरित खेती भी करते थे। धीरे-धीरे जंगलों के कट जाने के कारण, बोक्सा, जिनके जीवन की अर्थव्यवस्था जंगलों पर निर्भर थी, परेशान हो गये जिसके परिणामस्वरूप वे अब केवल खेती और खेतों में मजदूरी करने लगे। इनके अधिकतर गाँव केले, जामुन एवं शहतूत के वृक्षों से घिरे हुए होते हैं। जब जंगलों पर सरकारी नियन्त्रण कम था। ये लोग वनों से भोजन सामग्रियाँ एकत्र करते थे लेकिन आजकल खाद्य संग्रह वनों से नहीं कर पाते हैं। मत्स्याखेट, जानवरों का शिकार, लकड़ी काटकर बेचना, चटाई व डलिया बनाकर बेचना आदि बोक्साओं के वनों पर आधारित पेशे थे। ब्रिटिश काल में औपनिवेशीकारण का प्रत्यक्ष प्रभाव इन जनजातियों की वन आधारित अर्थव्यवस्था पर पड़ा है। थारू और बोक्सा ने तराई की विकट परिस्थितियों से सम्बन्ध स्थापित कर लिया था। तराई भाबर में नवांगन्तुकों को बसाये जाने से यहाँ पर शताब्दियों से वनों के संसाधनों पर जीवन यापन करने वाली जनजाति के परम्परागत जीवन पद्धति में हस्तक्षेप की प्रक्रिया जारी हुई। वन नीति की व्यवस्थाओं के बारे में जनजाति की अनभिज्ञता के कारण उन्हें कठिनाइयाँ झेलना पड़ती है।

भवन संरचना में परिवर्तन

धीर-धीरे बोक्सा जनजाति का वनों से सम्पर्क समाप्त होता जा रहा है। शोध सर्वेक्षण में यह ज्ञांत हुआ कि बोक्सा भवनों के छप्पर बनाने के लिये बोग्से पारम्परिक घास को जंगलों से लेकर आते थे, परन्तु वन अधिनियमों के चलते आज बोक्सों को अपनी पारम्परिक छप्पर निर्माण शैली को भी बदलना पड़ रहा है। भारतीय संविधान के 42 वें संशोधन के उपरान्त वन समवर्ती सूची

(Concurrent list) में आ गये। केन्द्र सरकार द्वारा वर्ष 1980 में पारित वन संरक्षण अधिनियम 1980 के अनुसार वन भूमि को वनेत्तर प्रयोग में लाने के लिए केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति अनिवार्य हो गई।

नवीन वन अधिनियमों के बन जाने के कारण आज बोक्साओं का वनों से पारम्परिक सम्पर्क न्यून्तम हो गया है। आज लालढांग क्षेत्र में राजाजी नेशनल पार्क के समीप रहने वाले बोक्साओं में शोध सर्वेक्षण से यही जानकारी प्राप्त हुई है कि अब बोक्साओं का वनों से सम्पर्क सिर्फ वन विभाग से चोरी छिपे घास, लकड़ी आदि लाने तक रह गया है। सालों से वनों के समीप रहने के कारण बोक्साओं के रीति-रिवाजों में वनों से सम्बन्ध स्पष्ट प्रकट होते हैं। बोक्सा शक्ति के रूप में पीपल के वृक्ष की पूजा करते हैं। जंगली जानवरों की सुरक्षा के नाम पर कार्बेट पार्क की दक्षिण सीमा पर बसे धारा, झिरना, कोठिरौ गाँवों को विस्थापित किया गया। इधर बोक्सा जनजाति क्षेत्र लालढांग को विस्थापित करने की तैयारी चल रही है। वनो से लकड़ी चोरी से लाई जाती है तथा घर से छप्पर इत्यादि के लिए फूस जंगल से चोरी छिपे लाई जाती है। बोक्सों के द्वारा स्थानीय वनों से 1. वोल (फेभवा), 2. मशरूम, 3. वैर मीलखन पेड़ की तिस्ती (मिर्च समान) केवल खाने को लाई जाती है।

परम्परागत कौशल में बदलाव

अंग्रेजी शासनकाल के पहले से ही जाड़ें के मौसम में प्रतिवर्ष गढवाल और कुमाऊँ के पहाड़ी गावों से लोग घास की खोज में अपने पशुओं को तराई भाबर में आया करते थे। हिमालय की पशुचारण व्यवस्था में तराई के महत्त्व को वर्णित करते हुए राहुल सांस्कृत्यायन ने 'कुमाऊँ' पुस्तक में हिमालय को पशु परिचारण का स्वर्ग कहा है। बोक्साओं का कृषि के सहायक पेशे के रूप में पशुपालन है। पशुओं में ये गाय भैंस और बैल पालते हैं। अब बकरी भी पालने लगे हैं। वैसे इसे ये लोग धर्म विरुद्ध मानते हैं। मुर्गी पालन भी धर्म विरुद्ध है। आवश्यकता के समय आकस्मिक खर्चो की आपूर्ति के लिये भी बकरी तथा मुर्गी पालन आर्थिक दृष्टि से उपयोगी हुआ है। क्योंकि बकरियों व मुर्गियों की मांग प्राय: ग्राम तथा ग्राम के बाहर सामान्यतया: बनी रहती है, अत: उन्हें बेचकर वे अपनी तात्कालिक आकस्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर लिया करते हैं। कुछ बोक्सा ग्रामों में तो मुर्गी पालन को परम्परागत विश्वासों के आधार पर निषिद्ध माना माता है।

बोक्सा जनजाति में कुछ परिवारों के द्वारा मोर भी पाला जाता है परन्तु मोर को बोक्साओं में पूजनीय माना जाता है। सुदूर जंगल के किनारे अवस्थित बुक्सा ग्रामों में पशुपालन की अनुकूल दशाये हैं। प्राय: पशुपालन की एक सहकारी व्यवस्था बोक्सा ग्रामों में देखने को मिलती है। जिसे 'परता प्रथा' कहते हैं। इस प्रथा में ग्राम का प्रति परिवार बारी-बारी एक-एक करके सम्पूर्ण ग्राम के पशुओं को चराने के लिये चरागाह में ले जाता है। बोक्साओं की लोक कला में भी पशुप्रेम दिखाई देता है। झोपड़ियों के सामने की दीवार में बोक्सा स्त्रियाँ हाथी, चिड़िया, गाय, धोड़े आदि का चित्र बनाती हैं। झोपड़ियों की पंक्ति में ही बीच-बीच में जानवर एवं भूसा, चारे के लिए भी झोपड़ियां बनी होती हैं जिन्हें 'बाड़ा' कहा जाता है। बोक्साओं में पशुपालन का मुख्य उद्देश्य केवल आर्थिक ही होता है। पशुओं के रहने के स्थान का 'सार' कहा जाता है। आज पशुपालन को बोक्साओं के जीवन का प्रमुख आधार माना जा सकता है, क्योंकि बोक्साओं की कृषि व्यवस्था व अन्य आर्थिक गतिविधियों का प्रमुख माध्यम पशु ही है। शोध सर्वेक्षण के अनुसार बोक्सा ग्रामों में पशुपालन सम्बन्धी निम्न समस्या हैं।

बोक्सा जनजाति को मूलत: पूर्व में वन आधारित अर्थव्यवस्था वाली जनजाति माना जाता था। नवीन वन अधिनियमों के कारण वनों से अलग आधुनिक समाज के बीच जीवनयापन करने वाली व सदैव से भोजन के लिये संधर्षरत इस जनजाति में लोक कला हस्तकला का बहुत अधिक विकास नहीं हो पाया है। गजेटियर के अनुसार इन लोगों में कोई कला अथवा निर्माण कौशल नहीं था तथा ये मात्र शिकार और थोड़ा बहुत खेती कर अपना जीवन चलाते हैं। लकड़ी काटकर बेचना, चटाई व डलिया बनाकर बेचना, सुतली बनाकर बेचना, रेशम के कीट पालना इनके प्रमुख व्यवसाय हैं।

बोक्सा जनजाति क्षेत्रों में रेशम कीट पालन विभाग के द्वारा एक रेशम कीट पालन योजना चलाई गयी। इस योजना को बहुत से बोक्सा परिवारों के द्वारा अपनाया गया और बहुत से बोक्सा परिवारों को इस योजना ने लाभान्वित किया है। इस कार्य को ये लोग वर्ष में दो बार करते हैं जो कि मार्च व सितम्बर में होता है। ग्राम सभा सभावाला में निवास करने वाली बोक्सा जाति के हर परिवार के घरों के आसपास 'तुतड़ी' (शहतूत) के पेड़ अधिक पाये जाते हैं। जिनको ये लोग जनवरी-फरवरी में कलम लगाकर उगाते हैं। रेशम के कोकेन को 'किसान मिलन केन्द्र' से ले जाते हैं जहाँ कि इनको रेशम कीट पालन विभाग उपलब्ध करवाता है। इसके बाद जब रेशम का कीड़ा कोकेन बनाकर अपनी चारों ओर रेशम के धागों को लपेटकर अण्डाकार बन जाता है तो इन्हें ये लोग गर्म रेशम निकालकर व्यापारियों के पास बेच देते हैं। गढवाल मण्डल में बोक्साओं में रेशम कीट पालन को प्रोत्साहन देने के लिये जनजातियों हेतु अनेक योजनायें बनी हैं। बोक्सा बाहुल्य क्षेत्रों में जहाँ पर रेशम का उत्पादन अधिक है। इन स्थानों पर सरकार के द्वारा रेशम कीट पालन गृहों की स्थापना की गयी है। शोध सर्वेक्षण में गढवाल मण्डल के अन्तर्गत सर्वाधिक रेशम उत्पादन व कीटपालन देहरादून जिले में देखा गया है। रेशम निदेशालय द्वारा बोक्सा जनजाति क्षेत्रों में रेशम उद्योग के विकास

हेतु मूलभूत सुवधाऐं कृषकों/कीटपालकों को सत्त उपलब्ध कराई जाती है, उनमें कृषकों को उन्नतशील प्रजाति की शहतूत कटिंग्स व सैपलिंग्स उपलब्ध कराना, नियंत्रित मूल्य पर चॉकीकृत रेशम कीट कृषकों को उपलब्ध कराना, निःशुल्क तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करना, समयबद्ध विपणन व्यवस्था व उत्पाद (कोया) का भुगतान सुनिश्चित कराना, निःशुल्क प्रशिक्षण उपलब्ध कराना, शहतूत वृक्षारोपण, चॉकी कीटपालन, उत्तरावस्था, कीटपालन, रोग नियंत्रण विशुद्वीकरण, कोयाकरण, रेशम रीलिंग, ट्विस्टिंग, वीविंग आदि महत्वपूर्ण विषय सम्मिलित है।

गुड़ बनाने की खांडसारी जो कि स्थानीय भाषा में चर्खी कहलाती हैं। इसको ये लोग छोटे इंजन से चलाते हैं। इससे निकले गन्ने के जूस (रस) को कड़ाइयों में पकाकर तैयार करते हैं। इस व्यवसाय में लगभग 7-8 लोग कार्यरत रहते हैं। बोक्सा मजदूर अधिक संख्या में इसमें कार्य करते हैं। जब गुड़ तैयार हो जाता है तो ये लोग इसे स्थानीय बाजारों में बेच देते हैं। जिसमें प्रत्येक भेली का मूल्य 15-16 रू0 होता है।

बोक्सा जनजाति के ग्रामोद्योग में मंदरा बनाना भी प्रमुख कुटीर उद्योग हैं। इस कार्य को यहाँ की महिलायें करती हैं तथा मंदरा यहाँ सर्दियों में बनाया जाता है जिसको कि ये लोग धान की पुराली से बनाते हैं जो कि इन्हें ठंड से बचाता है। तथा ही ये लोग इसको चारपाई की चौड़ाई के बराबर चौड़ा ही बनाते हैं तथा माड़ा को यहाँ के लोग बैठने के लिये बनाते हैं जो कि चौकी का प्रयोग करता है इसका प्रयोग ये लोग पायदान के लिए भी करते हैं।

बोक्सा लोग टोकरी बनाने का कार्य भी करते हैं। जिसको कि इनकी स्त्रियाँ बनाती हैं। ये लोग टोकरी शहतूत की पतली-पतली डंडियों से बनाती हैं तथा टोकरी बनाकर ये इसे बाजारों में सब्जी के लिए बेचते हैं जिसको कि ये लोग 5/- रू0 प्रति टोकरी के हिसाब से बेचते हैं साथ ही अपने लिए भी इसका प्रयोग करते हैं।

बोक्सा अपने खेतों में सन की खेती भी करते हैं। जिसके रेशे से पशुओं को बाँधने के लिये रस्सियाँ, चारपाई बुनने हेतु 'बांन' तैयार किया जाता है। यहाँ चारपाई की रस्सियाँ बनायी जाती हैं जिसको कि ये लोग बाबड़ से बनाते हैं तथा इसको स्थानीय बाजारों में बेचते हैं। इसकी कीमत 90-100 रू0 तक होती है तथा कुछ रस्सियाँ छोटी होती हैं जिनका प्रयोग यह घास, लकड़ी लाने के लिए करते हैं। कुछ रस्सियाँ ये लोग मालझन की बेल को छिलकर भी बनाते हैं। परन्तु इसका प्रचलन कम ही है। गुफलों का प्रयोग ये लोग आग जलाने के लिए करते हैं। जिससे इन्हें जंगलों से लकड़ी की कम आवश्यकता पड़ती है। इनको ये लोग गोबर से बनाते हैं। ये कच्चे गोबर को रोटियाँ जैसे बनाकर सुखा देते हैं। गोबर का उपयोग प्रमुखतः आग जलाने के लिये किया जाता है। कुछ बोक्सा महिलाऐं इन्हें बेचकर अपनी आजीविका चलाती हैं। इस प्रकार बोक्सा जनजाति आधुनिक चकाचौध के प्रभाव व शेष समाज से सम्पर्कों के कारण बदलावों की ओर अग्रसर है। आधुनिक बदलावों ने जहाँ जनजाति की परम्पराओं को प्रभावित किया है वहीं उनके जनजातीय जीवन में भी इसके कारण परिवर्तन आए हैं। आधुनिक समाज का प्रभाव इस जनजाति पर स्पष्ट दिखायी पड़ता है।

सन्दर्भः-

1. श्रीवास्तव, ए0 आर0 एन0 - उत्तर प्रदेश की जनजातियाँ, के0 के0 पब्लिकेशन, 1996, पृ0 सं0- 19
2. बिष्ट, डा0 सुरेन्द्र - उत्तराखण्ड के तराई भाबर का औपनिवेशीकरण और जनजातियों पर प्रभाव (अप्रकाशित ग्रन्थ) इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, हे0 न0 ब0 ग0 वि0 वि0, पृ0 सं0-130
3. बिष्ट, डा0 सुरेन्द्र - वही, पृ0 सं0-104
4. हसन, अमीर - द बुक्साज आफ तराई, बी0 आर0 पब्लिशिंग कार्पोरेशन, दिल्ली, पृ0 सं0 150
5. हसन, अमीर-, वही, पृ0 सं0-157,58
6. http://www.uttaranchalirrigation.com/districtplan/stateactivity.pdf डाउनलोड तिथि 5 जनवरी 2006
7. श्रोत- रेशम निरीक्षक, विकासखण्ड - विकासनगर के साथ प्रत्यक्ष साक्षात्कार के आधार पर
8. श्रोत- रेशम निरीक्षक, विकासखण्ड - विकासनगर के साथ प्रत्यक्ष साक्षात्कार के आधार पर
9. श्रोत- रेशम निरीक्षक, विकासखण्ड - विकासनगर के साथ प्रत्यक्ष साक्षात्कार के आधार पर
10. छुटटन, ग्राम- छोटा रसूलपुर, विकासखण्ड - बहाद्राबाद, जिला- हरिद्वार से प्रत्यक्ष साक्षात्कार के आधार पर
11. उपरोक्त
12. सांकृत्यायन, राहुल- कुमाऊँ, पृ0 सं0- 188
13. श्रीवास्तव, ए0 आर0 एन0- उत्तर प्रदेश की जनजातियाँ, के0 के0 पब्लिकेशन,1996, पृ0 सं0-20
14. हसन, अमीर- वही, पृ0 सं0- 20
15. श्रीवास्तव, ए0 आर0 एन0- उत्तर प्रदेश की जनजातियाँ, के0 के0 पब्लिकेशन,1996, पृ0 सं0-21
16. हसनैन नदीम, जनजातीय भारत,जवाहर पब्लिशिंग एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2001,पृ0 सं0-130
17. श्रीवास्तव, ए0 आर0 एन0-उत्तर प्रदेश की जनजातियाँ, के0 के0 पब्लिकेशन,1996, पृ0 सं0- 33
18. शोध कार्य हेतु सर्वेक्षण के आधार पर-ग्राम सभावाला, विकासखण्ड- विकासनगर, देहरादून
19. बिष्ट, डा0 वी0 एस0- उत्तराँचल, ग्रामीण समुदाय, पिछड़ी जाति एवं जनजातीय परिदृष्य, अल्मोड़ा बुक डिपो, 1997 पृ0 सं0- 207

◆◆◆